International Journal of Applied Research 2019; 5(4): 537-540

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(4): 537-540
www.allresearchjournal.com
Received: 25-02-2019
Accepted: 29-03-2019

डॉ. कमलेश कुमार सिंह
शोध निर्देशक, विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, के. ए. (पी.जी.) कालेज, कासगंज, उत्तर प्रदेश, भारत

तेजप्रताप सिंह
(शोध छात्र), डॉ. बी. आर. अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा, उत्तर प्रदेश, भारत

Correspondence Author:
डॉ. कमलेश कुमार सिंह
शोध निर्देशक, विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, के. ए. (पी.जी.) कालेज, कासगंज, उत्तर प्रदेश, भारत

भारत–अमेरिका सम्बन्ध : दक्षिण एशिया के विशेष सन्दर्भ में

डॉ. कमलेश कुमार सिंह एवं तेजप्रताप सिंह

प्रस्तावना

दक्षिण एशिया प्रत्यय आधुनिक विश्व राजनीति में भले ही पाश्चात्य शक्तियों की देन हो, किन्तु एक क्षेत्र विशेष के रूप में इसकी पहचान सदियों से पुरानी है। पुराणों एवं मिथको के अनुसार उत्तर में हिमालय से दक्षिण में समुद्र पर्यन्त फैले हुए विशाल भूखण्ड को, जिसे भारतवर्ष, भारत माता तथा हिन्दुस्तान कहा जाता था, उसे ही आज दक्षिण एशियाई क्षेत्र के रूप में जाना जाता है। वर्तमान में दक्षिण एशिया सात सम्प्रभु राष्ट्रों–भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान और मालद्वीप में विभक्त है। हिन्द महासागर के शीर्ष पर स्थित होने के कारण दक्षिण एशिया की स्थिति उसे भारी भू–सामरिक महत्व का क्षेत्र बना देती है। इसलिए पंडित जवाहर लाल नेहरू ने इसे अन्तरराष्ट्रीय चौराहे पर स्थित मानते हुए इसकी भू–सामरिक महत्ता को रेखांकित किया था। दक्षिण एशिया, मध्यपूर्व (पश्चिम एशिया) तथा दक्षिणी पूर्वी एशिया का स्थलीय संपर्क सेतु है। फारस की खाड़ी से निकलने वाला विश्व तेल यातायात–पथ इसी क्षेत्र को स्पर्श करता है। इसलिए विश्व शक्तियों की प्रतिस्पर्धा में यह क्षेत्र बरबस ही उभरकर सामने आता है। वर्तमान में इस क्षेत्र में तेल व प्राकृतिक संसाधनों तथा अन्य खनिजों के प्रकाश में आ जाने से इस क्षेत्र की महत्ता में और वृद्धि हुई है। अतएव विश्व शक्तियाँ प्राकृतिक संसाधनों से परिपूर्ण इस क्षेत्र का दोहन करने हेतु लालायिक हैं।

दक्षिण एशिया सदैव से ही आक्रान्ताओं के आकर्षण का केन्द्र रहा है। ईसा के 300 वर्ष पूर्व से ही इस क्षेत्र को आक्रान्ताओं के आक्रमण का सामना करना पड़ा। यूरोपीय जातियाँ मूलतः उपनिवेशवादी और साम्राज्यवादी थीं। उन्होंने लगभग दो शताब्दियों के अपने प्रवास में यहाँ की सभ्यता और संस्कृति को प्रभावित किया। ब्रिटिश व्यवस्था ने इस उपक्षेत्र में अपने को स्थापित करने के प्रयास में धार्मिक और जातिय स्तर पर विभेद कर शासन की नीति अपनायी। जिसकी अनुभूति वर्तमान में दक्षिण एशिया के विभिन्न देशों के मध्य विविध प्रकार के विवादों एवं संघर्ष के रूप में की जा सकती है।

दक्षिण एशिया में सुरक्षा और शक्ति की समस्या मूलतः परिधिगत राष्ट्रों के मध्य प्रदेश के भीतर संघर्ष, दक्षिण एशिया और हिन्द महासागर में महाशक्तियों की प्रतिस्पर्धा और हिन्द महासागर की राजनीति के रूप में परिलक्षित होती है।

दक्षिण एशिया का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं विशाल राष्ट्र होने तथा क्षेत्र के सभी राष्ट्रों से आबद्ध सीमाओं के कारण भारत का क्षेत्रीय स्थिरता एवं सहयोग के विभिन्न आयामों में निर्णायक प्रभाव रहा है। पाकिस्तान को छोड़कर अन्य सभी दक्षिण एशियाई देश किसी न किसी रूप में भारत की सहायता पर निर्भर हैं। जबकि भारत किसी भी देश पर निर्भर नहीं है। इस सन्दर्भ में भारत को दक्षिण एशिया की केन्द्रीय शक्ति के रूप में स्वीकार किया जाता है। इस क्षेत्र के प्रति महाशक्तियों के बढ़ते हुए रूझान एवं व्यापक शस्त्र प्रतिस्पर्धा के बाबजूद शक्ति संघर्षों को यथा सम्भव टालने तथा सहयोग की सम्भावनाओं के विकास में भारत की विशिष्ट भूमिका रही है। दक्षिण एशिया के राष्ट्रों में परस्पर सम्बन्ध एवं सहयोग विभिन्न कारणों से नकारात्मक रूप से प्रभावित रहा है। मतभेदों के बावजूद दक्षिण एशिया के राष्ट्र भारत से अपने आर्थिक विकास हेतु सहायता की अपेक्षा करते हैं। इसी प्रयोजन से इन राष्ट्रों ने 'सार्क' की स्थापना भी किया, किन्तु क्षेत्रीय स्तर पर सहयोग की मात्रा न्यून ही रही है।

भारत की लोकतांत्रिक, संसदीय और संघीय व्यवस्था अन्य दक्षिण एशियाई राष्ट्रों की राजनीतिक व्यवस्था के प्रतिकूल रही है। क्षेत्रीय नेतृत्व के मध्य पारस्परिक संदेह के कारण उनमें समरूपता स्थापित नहीं हो पायी है। दक्षिण एशिया में भारत की दो प्राथमिकतायें हैं– प्रथम सुरक्षागत और द्वितीय– विचाराधारागत। परिधिगत राष्ट्रों को भय है कि भारत एक बड़ा देश है और वह अपना वर्चस्व स्थापित करना चाहता है, किन्तु भारत की नीति कभी भी विस्तारवादी नहीं रही है। भारत चाहता है कि दक्षिण एशिया में कोई शत्रु नहीं आना चाहिए, जबकि अन्य राष्ट्र विशेषकर पाकिस्तान और बांग्लादेश बाह्य शक्तियों को इस उपक्षेत्र में बुलावा देते है।

वस्तुतः छोटे देश अपनी स्वाधीन राष्ट्रीय पहचान बनाये रखने के लिए भारत के विरोध में बोलते रहे हैं। भारत के अतिरिक्त अन्य दक्षिण एशियाई देशों में स्वस्थ मध्यम वर्ग का अभाव, आर्थिक संस्थाओं का विस्तृत न होना मूल समस्या है। इन देशों में शासक अभिजन अपने को स्थापित करने के लिए बाह्य शक्तियों से सहायता लेते रहे हैं जबकि भारत को चाहिए कि वह अपनी नीतियों, आर्थिक सम्पन्नता, छवि, राजनीतिक व्यवस्था आदि द्वारा दक्षिण एशिया के देशों की अपने प्रति शंका को दूर करे।

प्रारम्भ में अमेरिका की रुचि दक्षिण एशिया में कम थी। अमेरिका की विश्वदृष्टि में पूर्व एवं दक्षिण पूर्व एशिया को सामरिक एवं व्यापारिक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण समझा गया, किन्तु नवीन विश्व व्यवस्था के अस्तित्व में आने के बाद उदारवाद, बाजारवाद और भूमण्डलीकृत अर्थव्यवस्था को बल मिला है। इस दृष्टि से अमेरिका की रुचि इस क्षेत्र में बढ़ी है। उपभोक्ता बाजार के रूप में भारत दक्षिण एशिया का सबसे बड़ा देश है। वैश्वीकरण के दौर में अमेरिकी नीति में अर्थ व व्यापार महत्त्वपूर्ण हो गया है जो उसकी दक्षिण एशिया नीति में परिवर्तन में भी सहायक हो रहा है।

विश्व की दो महान लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं भारत और अमेरिका के आपसी सम्बन्धों का प्रश्न अन्तर्राष्ट्रीय–वेत्ताओं के समक्ष नित नये प्रश्न उपस्थित करता रहा है। अनेक स्तरों पर सैद्धान्तिक एवं मूल्य परक समानताओं के बावजूद दोनों राष्ट्रों में सन्देह एवं अविश्वास की दरार निरन्तर बनी रही है। किन्हीं भी दो देशों के पारस्परिक सम्बन्ध की तुलना में इन दोनों देशों द्वारा अपने द्विपक्षीय सम्बन्ध को अधिक भ्रमपूर्ण समझा गया[1]। भारत–अमेरिका सम्बन्ध को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न नामों से जाना जाता है। जैसे– अमैत्रीपूर्ण मित्रों[2] का सम्बन्ध अथवा शीत रूपी शान्ति[3]। भारत–अमेरिका के बीच सम्बन्ध परस्पर उतार–चढ़ाव से युक्त रहे हैं। यह सम्बन्ध मित्रता की चाह, तनाव, कटुता, संदेह एवं अलगाव के दायरे में बनते बिगड़ते रहे। इस दौरान आये सहजता एवं मित्रता के अवसर भी अपर्याप्त और भावनाओं एवं मनोकामनाओं के आधार तक ही सीमित रहे। अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा के प्रति भारत और अमेरिका के दृष्टिकोण लगभग समान रहे हैं। फिर भी इन लक्ष्यों की प्राप्ति के प्रति दोनों की प्रतिबद्धताएं पृथक–पृथक रही हैं।

स्वाधीनता के उपरान्त भारत ने गुटनिरपेक्षता के माध्यम से विश्वशान्ति की स्थापना तथा आर्थिक विकास हेतु आवश्यक परिस्थितियाँ निर्मित करने की नीति अपनायी। जबकि अमेरिका ने विश्व को साम्यवाद के प्रभाव से मुक्त करने तथा लोकतांत्रिक मूल्यों को प्रभावी बनाने के उद्देष्य से समाजवाद को सीमित करने तथा आर्थिक सहयोग के द्वारा ब्रिटिश साम्राज्यवादी शोषण से मुक्त नव स्वाधीन राष्ट्रों को अपने करीब लाने का प्रयत्न किया, किन्तु अमेरिकी प्रभाव के फलस्वरूप ये नव स्वाधीन राष्ट्र अपनी नीति एवं कार्यवाही की स्वतंत्रता को सुरक्षित रखने में असफल रहे। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति से जुड़े प्रश्नों पर इन राष्ट्रों को अमेरिकी सोच के अनुरूप विचार प्रकट करना पड़ा। 1962 के भारत–चीन युद्ध के समय अमेरिका ने भारत को उदारता पूर्वक सहयोग दिया किन्तु युद्धोपरान्त अमेरिका और ब्रिटेन ने भारत पर पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध सुधारने के लिए दबाव बनाया।

पाकिस्तान, भारत से अपनी शत्रुता के कारण स्वाभाविक रूप से अमेरिका का सहयोग करने को तत्पर था। अमेरिका ने दक्षिण एशिया में साम्यवाद के प्रसार को रोकने के लिए पाकिस्तान को सैन्य एवं आर्थिक सहयोग देना प्रारम्भ किया। फलतः दक्षिण एशिया में सैन्य सन्तुलन बिगड़ा, जिसका प्रतिकूल प्रभाव भारत–अमेरिका सम्बन्धों पर पड़ा। अमेरिकी सहायता ने पाकिस्तान के सामरिक महत्व को बढ़ा दिया। शीतयुद्ध काल में भारत–अमेरिका सम्बन्धों के निर्धारण का प्रमुख आधार राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रश्न पर दोनों देशों के मध्य मत भिन्नता रही। भारत के लिए अमेरिका के साथ अपने सम्बन्धों के निर्धारण का प्रमुख आधार अमेरिका–पाकिस्तान सम्बन्ध था[4]। अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को सैन्य सहायता देना तथा सैन्य गठबन्धन में शामिल करने को भारत ने अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए प्रत्यक्ष खतरा माना[5], जबकि भारत के प्रति अमेरिकी नीति के निर्धारण का प्रमुख आधार सोवियत संघ के प्रति भारतीय दृष्टिकोण था।

भारत–अमेरिका सम्बन्धों को निर्धारित करने वाले कारकों में भारत के पड़ोसी देश चीन की नीतियाँ भी थीं। स्वाधीनता के उपरान्त भारतीय नेतृत्व एशियाई पुनरूत्थान तथा भारत–चीन मित्रता एवं सहयोग के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में एशिया को एक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में अभ्युदय की आकांक्षा रखता था। पं. नेहरू चाहते थे कि भारत और चीन द्वारा पंचशील सिद्धान्तों का अनुपालन करने से गुटनिरपेक्ष ताकतें शक्तिशाली होंगी तथा विकासशील देश शीतयुद्ध के नकारात्मक निहितार्थों से बचे रहेंगे, परन्तु कालान्तर में उनके आपसी सम्बन्ध मधुर नहीं रहे सके, क्योंकि चीन भारत को एशिया में अपना प्रतिद्वंद्वी मानने लगा। उधर शीतयुद्ध के कारण चीन और अमेरिका के मध्य कटुता काफी अधिक बढ़ गयी और अमेरिका ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में चीन के बजाय भारत को स्थायी सदस्य बनाने का समर्थन किया[6]; किन्तु एशियाई सौहार्द के कारण भारत ने प्रस्ताव को ठुकरा दिया।

परिवर्तित अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में अमेरिका ने पाकिस्तान के माध्यम से चीन के साथ अपने सम्बन्धों को सुधारने का प्रयत्न किया तो भारत ने अपनी प्रतिरक्षा आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सोवियत संघ के साथ मैत्री संधि की[7]। भारत–सोवियत संधि को अमेरिका ने दक्षिण एशिया में युद्ध की सम्भावनाओं के रूप में देखा और निक्सन प्रशासन ने इसके प्रति तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त की[8]। बांग्लादेश के संदर्भ में अमेरिका ने भारत को उत्तरदायी माना और 1971 के भारत–पाक युद्ध के समय पाकिस्तान की मदद किया। 1974 में भारत द्वारा किये गये परमाणु परीक्षणों की अमेरिका ने आलोचना की और कहा कि इससे दक्षिण एशिया में परमाणु प्रसार को बल मिलेगा। अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप और भारत के दृष्टिकोण तथा भारत–सोवियत सम्बन्धों की अमेरिका ने आलोचना की।

इस प्रकार शीतयुद्ध काल में अमेरिका की दक्षिण एशियाई नीति में पाकिस्तान का महत्वपूर्ण स्थान रहा। अमेरिका–पाकिस्तान धुरी में चीन के प्रवेश ने उसे और भी जटिल बना दिया। फलतः दक्षिण एशिया के देशों की आर्थिक विकास प्रक्रिया प्रभावित हुई साथ ही अपनी सुरक्षागत आवश्यकताओं के लिए परिधिगत राष्ट्रों को शस्त्र प्राप्ति हेतु बाध्य होना पड़ा। जिससे इस उपक्षेत्र में शस्त्र प्रतिस्पर्धा बढ़ी। विशेष रूप से भारत एवं पाकिस्तान के मध्य की प्रतिस्पर्धा ने छोटे राष्ट्रों के भीतर भय एवं असुरक्षा की भावना पैदा की। स्पष्टतः शीतयुद्ध काल में भारत अमेरिका सम्बन्ध असहज ही बने रहे।

शीतयुद्ध के बाद बदलते अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य के साथ अमेरिका को अपनी विश्वदृष्टि में परिवर्तन लाना पड़ा। परिवर्तित परिवेश में साम्यवाद के प्रतिरोध के स्थान पर अमेरिका ने मुक्त बाजार और लोकतंत्रों के परिवार की नीति अपनायी। जिससे भारत–अमेरिका सम्बन्धों को नया आयाम मिला। हिन्द महासागर में भारत की महत्वपूर्ण भूमिका, चीन के प्रति सन्तलनकर्ता और विशाल आर्थिक सम्भावनाओं के कारण अमेरिका भारत को नजरअंदाज नहीं कर सकता। अब भारत दक्षिण एशिया में अमेरिका के दूरगामी हितों के साधक के रूप में प्रमुख हो गया है। सोवियत संघ का विघटन के उपरान्त अमेरिकी दृष्टि में पाकिस्तान की स्थिति पूर्व जैसी नहीं रही। जबकि एक विषाल अर्थतंत्र, सैन्य शक्ति, नाभिकीय शक्ति एवं राजनीतिक रूप से सुदृढ़ भारत की उपेक्षा करना अमेरिका के लिए आसान नहीं है। एशिया में चीन के बढ़ते आर्थिक आधार ने भी अमेरिका को भारत के प्रति आकर्षित किया है। फलतः अमेरिका ने भारत को सबसे बड़े व्यापारिक साझीदार के रूप में स्वीकार किया। यद्यपि भारत और अमेरिका के आपसी

सम्बन्धों में सुधार स्पष्टतः दृष्टिगोचर हो रहे हैं। फिर भी कश्मीर–समस्या एवं भारत में मानवाधिकारों की स्थिति जैसे विषयों पर अमेरिकी दृष्टिकोण में विशेष परिवर्तन दिखाई नहीं पड़ रहे हैं[9]। व्यापक परमाणु परीक्षण संधि (ब्जठज) एवं पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध सुधारने तथा संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत की स्थायी सदस्यता के प्रश्न पर भारत और अमेरिका के मध्य मतभेद बने हुए है। राष्ट्रपति क्लिंटन ने कश्मीर संकट को विश्व शान्ति के लिए खतरा कहा। कश्मीर में उग्रवादी गतिविधियों के विरुद्ध भारतीय कार्यवाही को अमेरिका ने मानवाधिकारों का उल्लंघन कह कर प्रचारित किया और अमेरिकी कांग्रेस ने कश्मीर में जनमत संग्रह की मांग की।

प्रेसलर संशोधन और सी.टी.बी.टी. के प्रश्न पर मतभेदों के बावजूद[10] 21वीं शताब्दी में विश्व राजनीति में भारत की महत्वपूर्ण भूमिका की सम्भावनाओं से भारत के प्रति अमेरिकी सोच में परिवर्तन आया, जिसका प्रभाव कारगिल संकट के समय देखा गया। अमेरिका के उप विदेषमंत्री टालबोट ने कहा कि भारत और अमेरिका कभी भी सैनिक प्रतिपक्षी नहीं होंगे तथा भविष्य में दोनों एक प्रभावशाली सहयोगी सिद्ध होंगे। मार्च, 2000 में राष्ट्रपति क्लिंटन ने भारत की यात्रा की। जार्ज डब्ल्यू बुश के कार्यकाल में भारत अमेरिकी सम्बन्धों में प्रगति आयी। 11 सितम्बर, 2001 को अमेरिकी वर्ल्ड ट्रेड सेन्टर पर आतंकवादी कार्यवाही ने दोनों देशों को करीब ला दिया। 13 दिसम्बर, 2001 को भारतीय संसद पर आतंकी हमले की अमेरिका ने निन्दा की। जुलाई, 2006 में मुम्बई में शृंखलाबद्ध बम विस्फोटो की अमेरिका द्वारा निन्दा की गयी। आतंकवाद पर दोनों देशों का दृष्टिकोण समान है। सितम्बर, 2002 में भारतीय प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी ने अमेरिका की यात्रा की। जून, 2003 में उपप्रधानमंत्री लालकृष्ण आडवाड़ी ने अमेरिका की यात्रा की। इराक युद्ध में भारत ने अमेरिका का न तो विरोध किया न ही खुला समर्थन किया। मार्च, 2006 में राष्ट्रपति जार्ज डब्ल्यू बुश की भारत यात्रा दोनों राष्ट्रों के आपसी सम्बन्धों को सुधारने की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम था। जब दोनों देशों ने असैन्य परमाणु ऊर्जा सहयोग समझौते पर मुहर लगाई और समझौते को अमेरिकी कांग्रेस के प्रथम सदन ने 26 जुलाई, 2006 को 68 के मुकाबले 359 मतों से पारित कर दिया है। संसद में दिये गये अपने बयान में प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने स्पष्ट कर दिया कि भारत अमेरिका के साथ किसी भी ऐसी संधि पर हस्ताक्षर नहीं करेगा जो भारतीय हितों के विरुद्ध हो।

भारत–अमेरिका के बीच बढ़ते सहयोगात्मक सम्बन्धों को रेखांकित करते हुए भारत में अमेरिका के राजदूत डेविड सी, मलफोर्ड ने कहा था कि अमेरिका और भारत ऐसी भागीदारी के लिए उद्वत है जो 21वीं सदी में अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार के निर्धारण में महत्वपूर्ण होगा। अमेरिकी विदेश मंत्री कोंडालिजा राइस के अनुसार अमेरिका भारत के साथ अपने सम्बन्धों के प्रति अत्याधिक गंभीर है और हम भारतीय पक्ष के साथ इसे संभव बनाने का पूर्ण प्रयत्न कर रहे हैं। इसी प्रकार अमेरिकी विदेश विभाग के अण्डर सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फार पोलिटिकल अफेयर्स आर. निकोलस बर्न्स ने कहा है कि 'आने वाले तीन चार वर्षों में आप जो सर्वाधिक बड़ा बदलाव देखेंगे वह दक्षिण एशिया पर केन्द्रित अमेरिकी दृष्टि, विशेषरूप से भारत के साथ सामरिक दृष्टि से घनिष्ठ सम्बन्धों की स्थापना है।' एक लम्बे समय तक दूर रहने के बाद अब भारत और अमेरिका विश्वमंच पर दो सच्चे सहयोगियों की भांति सामने आ रहे हैं। दक्षिण एशियाई मामलों के सहायक विदेश मंत्री क्रिस्टीन रोक्का का मत है कि– 'भारत–अमेरिका' सम्बन्धों की दृष्टि से यह वर्ष युगांतकारी है।

भारत अमेरिकी सम्बन्धों की मधुरता के बावजूद भारतीय पक्ष को आशंका है कि अमेरिका सहयोग की कीमत भी प्राप्त करने का प्रयत्न कर सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेन्सी में अमेरिकी दबाव के कारण ही भारत द्वारा ईरान के विरुद्ध मतदान करने से इन आशंकाओं को बल मिलता है। इससे जहाँ भारत की गुटनिरपेक्ष छवि प्रभावित हुई वहीं संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत की स्थायी सदस्यता पर भी भारत, अमेरिका का समर्थन नहीं प्राप्त कर सका। परमाणु निःशस्त्रीकरण और आतंकवाद पर अमेरिकी नीति के प्रति भी दोनों के मध्य मतभेद विद्यमान है। फिर भी दक्षिण एशिया में अपने व्यापक हितों को दृष्टिगत रखते हुए अमेरिका शान्ति एवं सुरक्षा करने के लिए एक शक्तिशाली भारत की आवश्यकता अनुभव करता है। तेजी से बढ़ रही भारत की अर्थव्यवस्था एवं उसकी सैन्य क्षमता जो एशिया में चीन को सन्तुलित करने में सहायक है, अमेरिका को भारत के नजदीक लाने में प्रमुख कारक है। वर्तमान में आतंकवाद अमेरिकी नीति में प्रमुख है और इसे समाप्त करने के लिए अमेरिका को भारत के समर्थन की आवश्यकता है। अमेरिका ने पाकिस्तान सीमा पर आतंकवाद को नियंत्रित करने के लिए दबाव डाला और कश्मीर में सक्रिय कुछ आतंकवादी संगठनों को प्रतिबन्धित भी किया।

2005 में अमेरिकी विदेशमन्त्री कान्डोलिया राइस ने भारत दौरे के साथ अमेरिका के साथ सम्बन्धों में सुधार के लिये रक्षा सहयोग पर हस्ताक्षर किया। साथ ही दोनों देशों ने दश वर्ष के लिये नागरिक परमाणु सहयोग समझौते पर हस्ताक्षर किये। 2011 में अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओवामा ने संयुक्तराष्ट्र सुरक्षापरिषद में भारत की दावेदारी का समर्थन किया।

2014 में भारत के प्रधानमन्त्री के रूप में नरेन्द्र मोदी को बराक ओवामा ने जीत की बधाई दी और अमेरिकायात्रा का न्यौता दिया। सितम्बर 2014 में प्रधानमन्त्री मोदी ने अमेरिका की यात्रा की और अमेरिका के राष्ट्रपति को 26 जनवरी 1915 के गणतन्त्र दिवस के अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में आमन्त्रित किया। अमेरिका में श्री ओवामा ने गुजराती में ''केम छो मिस्टर पी.एम.'' कहकर उनका गरमजोशी से स्वागत किया। श्री ओवामा ने इस भेंट पर अपनी प्रक्रिया व्यक्त करते हुये कहा, ''मैं भारत के प्रधानमन्त्री के न सिर्फ गरीबों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने एवं अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करने के प्रयासों व उनके इस दृढ़ विचार से भी प्रभावित हुआ कि वह अपने देश को ऐसी बड़ी शक्ति बनाना चाहते हैं, जो कि विश्व में शान्ति व सुरक्षा लाने में सहयोग कर सके''।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अमेरिका की दक्षिण एशिया नीति का भारत–अमेरिकी सम्बन्धों पर गहरा प्रभाव रहा। द्वितीय विश्वयुद्धोपरान्त अमेरिका भारत को अपने गुट में सम्मिलित कर एशिया में अपने प्रभाव को मजबूत करना चाहता था; किन्तु भारत के इन्कार करने एवं गुट निरपेक्षता की नति को अपनाने के बाद अमेरिका ने पाकिस्तान को अपना सहयोगी बनाया। भारत के साथ अपनी शत्रुता के कारण पाकिस्तान स्वाभाविक रूप से अमेरिका का सहयोगी बन गया। एशिया में समाजवाद के प्रसार को रोकने के नाम पर अमेरिका ने पाकिस्तान को सैनिक एवं आर्थिक मदद देना प्रारम्भ किया। फलतः दक्षिण एशिया में सैन्य सन्तुलन बिगड़ा, जिससे भारत अमेरिका सम्बन्धों में तनाव आया। शीतयुद्ध काल में अमेरिका की दक्षिण एशिया नीति भारत के विरुद्ध ही रही, परन्तु शीतयुद्ध की समाप्ति और थोड़े समय में घटी विश्वव्यापी घटनाओं ने अनेकों परिवर्तनों के साथ ही दक्षिण एशिया के प्रति अमेरिकी नीति में भी बदलाव के संकेत दिए, जिससे भारत–अमेरिका सम्बन्धों में प्रगाढ़ता आयी। शीतयुद्ध के अन्त ने पाकिस्तान के सामरिक महत्व को कम कर दिया। फलतः अमेरिका की रूचि पाकिस्तान में कम हुई।

नवीन विश्वव्यवस्था में आर्थिक कारकों के महत्वपूर्ण हो जाने से, भारत के विशाल बाजार, उसकी प्रजातांत्रिक नीतियों और तकनीकी कुशलता आदि ने अमेरिका को भारत के निकट लाने में सहयोग किया। वर्तमान में अमेरिका के पास दक्षिण एशियाई क्षेत्र में सामयिक घटनाओं को प्रभावित करने का असाधारण अवसर है। विश्व इतिहास में प्रथम बार अमेरिका के सम्बन्ध भारत से अच्छे हुए हैं। सम्प्रति भारत की स्थिति भी साठ या सत्तर के

दशक की तुलना में अच्छी है। आज भारत का विदेशी मुद्रा भण्डार 150 अरब डालर से ऊपर है। भारत खाद्यान्न की दृष्टि से भी आत्मनिर्भर है। सामरिक और तकनीकी दृष्टि से भी भारत की स्थिति सुदृढ़ हुई है। 1971 में बांग्लादेश युद्ध में विजय, पोखरण में सफल परमाणु परीक्षणों, अंतरिक्ष विकास कार्यक्रमों तथा तीव्र आर्थिक विकास के कारण भारत ने सम्पूर्ण विश्व का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है। आज भारत विश्व के प्रमुख शक्ति–केन्द्रों में गिना जाता है। उसकी स्थिति किसी महाशक्ति से कम नहीं है। विश्व राजनीति में भारत की सशक्त उपस्थिति का प्रमाण एशिया सोसाइटी में अमेरिकी राजदूत निकोलस बर्न्स के इस बयान से स्पष्ट है कि ''यह शताब्दी लोकतांत्रिक भारत के विश्व में एक शक्ति के रूप में स्थापित होने की गवाह बनेगी। पिछले दो दशकों से भारत का सफर इसकी पुष्टि करता है। वह उन आर्थिक, राजनीतिक और सामरिक क्षमताओं को प्राप्त करने की ओर अग्रसर है जो उसे विश्व की सबसे बड़ी ताकतों में स्थान दिलायेंगी। इसे देखते हुए यह हमारे राष्ट्रीय हित में है कि हम अमेरिका के साथ मजबूत सम्बन्ध विकसित करें[11]। वस्तुतः आज भारत को अमेरिका की जितनी आवश्यकता है, अमेरिका को भारत की उतनी ही आवयकता है। यद्यपि अमेरिका भारत के साथ अच्छे सम्बन्ध का इच्छुक है तथापि वह अपने पुराने मित्र पाकिस्तान को भी सम्भवतः नाराज नहीं करना चाहता। उम्मीद की जाती है कि आने वाले समय में स्थितियाँ और अधिक स्पष्ट होंगी और भारत तथा अमेरिका के मध्य सम्बन्ध और अधिक प्रगाढ़ होंगे।

अन्त में भारत–अमेरिका सम्बन्धों में हो रहे सुधार तथा भारत के तीव्र आर्थिक विकास के उद्देष्य से अमेरिका द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में किए जा रहे सहयोग को सकारात्मक सोच के साथ स्वीकार किया जाना चाहिए। फिर भी इनके प्रति पूर्ण सहमति व्यक्त करने से पूर्व उनका क्षेत्रीय सुरक्षा समीकरणों एवं भारतीय राष्ट्रीय हितों के संदर्भ में निष्पक्ष परीक्षण किया जाना भी आवष्यक होगा।

सन्दर्भ

1. Madan Lal Goel. Indo-American Relation in a New Light, Nalini Kant Jha (Ed.) India's Foreign Policy in a changing world 2000, 58.
2. Kunhi Krishna TV. The Unfriendly Friends: India and America, New Delhi, Indian Book Company 1974.
3. Brands HW. India and the United States: The Cold Peace Boston: G.K. Hal 1990.
4. Surjit Man Singh. The United States and India, World Focus 1993, 15.
5. Dennis Kux. Estranged Democracies, Sage Publications 1993, 448.
6. Dixit JN. India's Foreign Policy, Prabhat Publication. New Delhi 2001, 28.
7. मीणा, राममूर्ति, भारत–अमेरिका सम्बन्ध : नवीन परिप्रेक्ष्य जयपुर, 2002, पृष्ठ–25
8. Plamer ND. The United States and India. The Dimensions of Influence, New York, Praegetr 1984, 48-49.
9. Malhotra Vinay Kumar. Indo-US. Relation's in Ninties, Anmol (Ed.) Publication's New Delhi 1995, 16.
10. Bertsch Gavy K. Enganging India. U.S. Strategic Relations with the World's Largest Democracy, Routledge Publication, New York 1999, 202.
11. के. सुब्रहमण्यम, अमेरिका पर भरोसे की वजह, दैनिक जागरण, 24 अप्रैल, 2006